International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 20-05-2019; Accepted: 29-06-2019
www.hindijournal.com
Volume 5; Issue 4; July 2019; Page No. 85-87

भूमंडलीकरण : प्रकृति और मनुष्य

मनोज कुमार

शोधार्थी, हिन्दी विभाग, केरल केंद्रीय विश्वविद्यालय, सिंधु ब्लाक, पेरिया, कासरगाड, केरल, भारत |

प्रस्तावना

वह विज्ञान मयी अभिलाषा,पंख लगाकर उड़ने की,
जीवन की असीम आशाएँ कभी न नीचे मुड़ने की ||[1]

मनुष्य प्रकृति उद्भूत प्राणी है | प्राणी वही; जिसमें प्रकृति के कल-कल, छल-छल, सुरम्भभाव भीनी और झंझावातों का वास्तविक एहसास हो ! प्रकृति के अनवरत परिवर्तन के लिए प्राणी प्रस्तुत हो | उसके साथ लय में लय मिलाकर चले | अपने आप को उसके तरानों का तरन्नुम बनाए रखे | उसकी आत्मियता में घुल-मिल जाएँ | उसके कदम से कदम मिलाकर अपने जीवन की गति को प्रकृति के गति के साथ समरस बनाए रखे | अब तक ऐसा ही होता रहा, परंतु जब से भूमंडलीकरण ने मनुष्य को उपभोक्तावादी दृष्टि प्रदान की तब से उसने अपनी सत्ता प्रकृति से अलग कर ली | मनुष्य और प्रकृति के बीच एक दुराव पैदा हो गया है | दोनों एक दूसरे के विपरीत बैठ रहे हैं | मानव कृत्रिमता का अनुगामी होता गया | प्रकृति उसे अपने पास बुलाती रही, परंतु मनुष्य की महत्वाकांक्षाओं ने पर पसार लिये, फलस्वरूप वह उन्मुक्त गगन में निरुद्देश्य विचरण करने में आनंद का अनुभव करने लगा है | उसने हृदय विकास की जगह मस्तिष्क विकास को ही सर्वोपरि माना है | हृदय के अंदर उठने वाली हिलोरों का वह मस्तिष्क के प्रभाव से निरंतर दमन करता रहा है | भूमंडलीकरण की प्रक्रिया ने मस्तिष्क को ही सर्वोपरि रखा है | मस्तिष्क ने ही भूमंडलीय औद्योगिकरण को बढ़वा दिया है | मनुष्य को प्रकृति के हर चीज को उपभोग की वस्तु समझने पर मजबूर कर दिया है | जब उपभोग करने की प्रवृत्ति हावी हो जाती है, तो वहाँ पर हृदय भाव का अभाव होता है | काशीनाथ सिंह अपने साक्षात्कार में कहते हैं कि, "वह एस्थेटिक सेंस जो मनुष्य के भीतर रहा करता था, गायब हो रहा है | यह बदलाव की पूरा हिंदुस्तान हमारी आंखों के सामने खुल रहा था | हम हरियाली, छोटी-छोटी चीजें देख रहे थे, लेकिन जो औद्योगिकरण हो रहा है, वह हमारी सिन्सिबिलिटी को किस तरह मार रहा है और मारता चला जा रहा है |"[2] हम इसे समझने और इस पर अमल करने से बचना चाहते है |

भूमंडलीकरण ने हमें प्रकृति का उपभोग करने के लिए तैयार कर लिया है | जो व्यक्ति प्रकृति का ज्यादा से ज्यादा उपभोग करता है, वह सुविधा परक जिंदगी गुजारने लगता है | उसके सुविधा परक जिंदगी को देखकर अगला व्यक्ति भी अपने आपको ज्यादा से ज्यादा प्रकृति का उपभोग करने में लगा देता है | इस तरह से वैश्विक स्तर पर भी यही धारणा लागू होती है | एक देश दूसरे देश से अधिक सुविधा संपन्न होने के लिए, प्रकृति का उपभोग करता है | जंगलो को काट कर चौड़ी सड़कों का निर्माण, कंक्रीट के गगन चुम्भी इमारतों का निर्माण, ज़हर उगलते कल-कारखाने जीवन में ज़हर घोल रहें हैं | अमेरिका और जापान आदि विकसित देश प्रकृति का भोग कर भौतिकता में संपन्न होते चले गए हैं | लेकिन अंधाधुंध उपयोग करने से प्रकृति का संतुलन बिगड़ जाता है | संयुक्त राष्ट्र के संस्थान जैवविविधता और पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं पर इंटर गवर्नमेंटल साइंस-पॉलिसी प्लेटफार्म की नई वैश्विक आकलन रिपोर्ट आगाह करती है कि दस लाख वनस्पतियां और पशु प्रजातियां खत्म होने की कगार पर हैं, ये प्रजातियां हमारा सुरक्षा जाल हैं | वे हमें खाना और चारा देती हैं | मिट्टी को समृद्ध बनाती हैं, प्रदूषित हवा और पानी को साफ करती हैं और हमारे पारिस्थितिकी तंत्र को समृद्ध रखती हैं |[3] ऐसी भयंकर समस्याओं के पीछे मनुष्य के विचार हैं ! जिसने प्रकृति का अत्याधिक दोहन करके समस्या को जन्म दिया, जो मानव जाति के लिए ही नहीं अपितु पृथ्वी के समस्त प्राणियों के लिए घातक है |

वैश्विक स्तर से हटकर हम अपने देश की बात करें तो पाते हैं कि हम भी उनकी तरह ही अपनी प्राकृतिक संपदा का दोहन कर रहे हैं, जो भौगोलिक स्थिति थी; वह अब नहीं रही | हम पत्थरों को तोड़ कर उनका विभिन्न प्रकार से उपयोग कर रहे हैं | सड़कों का निर्माण हो या घरों का; हम पत्थरों का और मिट्टी का उत्खनन कर रहे हैं | इससे भारत की ऋतुओं में असंतुलन पैदा हो रहा है | ऋतुओं के असंतुलन से भारत में सूखा और बाढ़ जैसी समस्याएं आम हो गयी हैं | जिससे जन–जीवन प्रभावित हो रहा है | भारत में कृषि समस्या का कारण सूखा और बाढ़ भी है | भौगोलिक परिवर्तन से बाढ़ जैसी विनाशकारी समस्याएं प्रलय का रूप ले लेतीं हैं | उत्तराखंड में जून 2013 के भारी बारिश के चलते भूस्खलन और केरल में अगस्त 2018 की भयंकर बाढ़ ने न जाने कितने लोगों के जीवन को तहस-नहस कर दिया | अरावली पहाड़ियों को नष्ट करने के दुष्परिणाम हमारे सामने हैं | जिन क्षेत्रों से अरावली श्रृंखलाओं का विनाश हुआ उन क्षेत्रों में

प्रकृति का असंतुलन, पर्यावरण, प्रदूषण, ऋतुचक्र में बदलाव, जैविक विविधता की समाप्ति, इंसान में प्रकृति से मैत्री भाव का ह्रास, पाताल में रासायनिक विषैले तत्वों की वृद्धि, तेजी से गिरता भूजल स्तर, दुर्लभ वनस्पतियों का विनाश और मानवीय संवेदना में लगातार ह्रास जैसी गंभीर समस्याएं देखने को मिल रही हैं |[4]

पर्यावरण प्रदूषण को हम विभिन्न रूपों में देख सकते हैं | मृदा प्रदूषण, जल प्रदूषण, वायु प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण, रेडियोएक्टिव प्रदूषण आदि, जैसी समस्याएं भारत देश में व्यापक स्तर पर उत्पन्न हुई हैं | जल की ही बात ले तो हम पाते हैं कि पहले की अपेक्षा अब जलस्तर नीचे हो गया है | भारत के कई शहर हैं, जो जल की समस्या से जूझ रहे हैं | जल है तो कल है ! वे शहर जहां पर पानी की समस्या बढ़ गई है- दिल्ली, बेंगलुरु, चेन्नई, मुंबई जैसे शहरों में पीने योग्य पानी की कमी हो गई है | जीवन को सुचारू रूप से चलाने के लिए पानी की आवश्यकता होती है | दैनिक जीवन में पानी का स्थान सर्वोपरि है | सोचिए यदि पानी नहीं मिलेगा तो जीवन कैसे चलेगा ! जिस शहर में पानी खत्म हो जाएगा, तो वहाँ के लिए पानी दूसरे स्थानों से लाना पड़ेगा और वहाँ पानी यदि लाना संभव नहीं होगा, तो जन-मानस को अपना स्थान छोड़कर पानी वाले स्थान की तरफ पलायन करना पड़ेगा | पानी वाले स्थान पर पहले से रह रहे लोगों व आगंतुक में द्वंद्व (आपसी संघर्ष) पैदा होगा और वे पानी के लिए आपस में लड़ने लगेंगे | तभी तो संजीव अपने उपन्यास 'फांस' में कहते हैं कि दुनिया का अगला महाभारत पानी के लिए होगा यहां इसकी शुरुआत होगी तुमसे और हमसे ![5]

काशीनाथ सिंह अपने साहित्य में प्रकृति समस्या को केंद्र में रखते हुए 'सुख' कहानी लिखा हैं | 'सुख' कहानी में भोला बाबू के माध्यम से प्रकृति के प्रति संवेदनहीनता के यथार्थ का वर्णन किया है | व्यक्ति रोजमर्रा की जिंदगी में ऐसे तल्लीन हुआ है कि उसका प्रकृति की खूबसूरती के प्रति ध्यान नहीं जाता | सब अपने-अपने काम में व्यस्त हैं, उनको कोई परवाह नहीं है कि 'सूरज' उदय हो रहा है या फिर अस्त हो रहा है | जो प्राणियों की अस्तित्व का प्रमुख घटक है | सब उसके प्रति उदासीन हो गए हैं | काशीनाथ सिंह कहते हैं कि "हाय दुनिया कितनी बदल गई है"[6] इसमें कोई संदेह नहीं है कि वास्तव में दुनिया बहुत बदल गई है | उसका प्रकृति से कोई वास्ता नहीं है, वह अपने आप को प्रकृति के बिना संपूर्ण मानता है | जबकि ऐसा नहीं हो सकता | प्रकृति के बिना हम सब अधूरे हैं | हमें प्रकृति के साथ तालमेल बनाए रखना होगा | काशीनाथ सिंह पर्यावरण की सुखद अनुभूति को एहसास करते हैं | और लोगों को प्रकृति विमोह के तर्ज पर कहते हैं, कितने दिन हो गए बारिश में भींगे ? कितने दिन हो गए लू के थपेड़े खाए ? कितने दिन हो गए जेठ के घाम में झुलसे ? कितने दिन हो गए अंजोरिया रात में मटरगश्ती किए ? कितने दिन हो गए ठंड में ठिठुर का दांत किटकिटाए ? क्या ये इसीलिए होते हैं कि हम इनसे बच के रहें ? बच बचा के चले ? या इसलिए कि इन्हें भोगें, इन्हे जिए, इनसे दोस्ती करें, बतियाएँ, सिर माथे पर बिठाए ?[7] और दिव्यालौकिक अनुभूति से परिपूर्ण हों |

आखिर मनुष्य को हो क्या गया है ? न जाने कितने लोग हैं जो धन संपन्न हैं और भौतिकता से लबरेज हैं | वे एयरकंडीशन घरों में रह रहे हैं, उन्हें बाह्य प्रकृति की वास्तविकता से कोई मतलब नहीं है | ये सब प्रकृति से खिलवाड़ करने में पीछे नहीं हैं | अधिकाधिक लकड़ियों को काटना, उनका फर्नीचर बनाना, जल जंगल जमीन की समस्या को उत्पन्न करना ही इनका ध्येय है | जंगलों का अधिकाधिक दोहन होने पर जो प्रकृति के संतुलन में बदलाव आया है उसका परिणाम हम सबके सामने है | आदिवासियों से जंगल छीनकर, उन्हे बेघर करना | उनके जमीन से खनिज पदार्थों को निकालकर जमीन को जगह-जगह खड्डे के रूप में छोड़ देना | खड्डे में पानी इकठ्ठा होने के कारण मच्छरों के भारी मात्रा में उत्पन्न होने से बीमारी का प्रकोप होना | ये सारे कार्य यह दर्शाते हैं कि औद्योगिक युग में लोग प्रकृति के प्रति संवेदनशून्य होते जा रहे है | निष्कर्षता हम कह सकते हैं कि संवेदनशून्य होना भूमंडलीकरण कि प्रक्रिया है जो लोगों पर हावी है | साधन सम्पन्न वर्ग की उपभोक्तावादी प्रवृत्ति के फलस्वरूप समस्त प्राणियों के अस्तित्व पर ही संकट मंडराने लगा है | कुछ लोगों के द्वारा किए गए कारनामों का भुकतान समस्त प्राणियों को करना पड़ेगा | प्रकृति के अत्यधिक दोहन से उत्पन्न इस समस्या के संदर्भ में अमिताभ घोष ने 'इंडिया टुडे पत्रिका' में अपने विचार कुछ इस तरह से व्यक्त किए हैं - "विनाश होने लगा है, मुद्दा यह है कि हम इसे देखना कब शुरू करेंगे दिल्ली पानी की कमी से जूझ रही है | लेकिन लोग अभी तक चेते नहीं है | जलवायु परिवर्तन को हम अपने चारों ओर महसूस कर सकते हैं |[8] जल की समस्या से केवल दिल्ली की ही नही जूझ रही है अपितु भारत के बहुतेरे शहर का हाल बेहाल है |

इस तरह से दुरुप्रयोग करने से पर्यावरण को गहरा झटका लगा है | हम पृथ्वी के सभी खनिजों का दोहन पैमाने से अधिक कर रहे हैं | इससे हमारी पीढ़ी का संचालन तो हो सकता है परंतु आने वाली पीढ़ी का क्या? आने वाली पीढ़ी को उपयुक्त पानी, हवा, खाद्य पदार्थों के लिए संघर्ष करना पड़ेगा तथा उनका जीवन दुष्कर हो जाएगा | जहां अभी पानी की उपलब्धता है, वहाँ पानी के उपयोग में देखा गया है कि अत्यधिक दोहन हावी है | जब से गांव में टुल्लू पंप की व्यवस्था हो गई है, प्रायः आये दिन हम देख सकते हैं कि व्यक्ति आवश्यकता से अधिक पानी का उपयोग कर रहा है | वह जहां एक बाल्टी पानी से नहा सकता है, वह दस बाल्टी पानी को नष्ट कर रहा है | जगह-जगह पानी से भरे गड्ढे देखे जा सकते हैं | लोगों को समझना चाहिए कि आज जहां पर पानी की कमी हो रही है, वहाँ पहले पानी था पर अब नहीं है ! कल कारखानों से निकलने वाला कचरा नालों के माध्यम से नदियों में प्रवाहित होकर पानी को प्रदूषित कर रहा है | नदियों से प्राप्त होने वाला खाद्य पदार्थ जिसे खा कर प्राणी बीमार पड़ रहा है | दिनों दिन असाध्य बीमारी का शिकार हो रहा है |

विश्व में चल रहे कुछ पर्यावरण आंदोलन जिनको बड़ी मात्रा में जन समर्थन प्राप्त होता रहा है, जो काफी हद तक पर्यावरण को बचाने के लिए सक्षम भी रहे | इस प्रकार के प्रमुख आंदोलनों में भारत का 'चिपको आंदोलन' काफी सफल रहा था | इस आंदोलन में राष्ट्रीय तथा अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पेड़ों से चिपक कर, सत्याग्रही स्रोतों के उपयोग द्वारा पर्यावरण को बचाए रखने के प्रयत्न किए गए | हिमालय की तराई में जंगलों की कटाई, लकड़ी का व्यापार और सामान्य जन का प्राकृतिक स्रोतों पर अधिकार इस आंदोलन के प्रमुख मुद्दे रहे | यह आंदोलन प्रमुखतः दो वादों, गांधीवाद और मार्क्सवाद के विचारों से प्रभावित रहा | इस आंदोलन में कार्यकर्ता के रूप में स्थानीय संगठन एवं महिलाओं ने अपनी सक्रिय भूमिका अदा की | पर्यावरण आंदोलनों की इस शृंखला में (फिलिपीन) चिकोबांध आंदोलन चलाया गया | जिस के कार्यकर्ताओं ने उग्र और सशस्त्र प्रतिरोध किया तथा बाद में शांतिपूर्ण प्रदर्शन करते रहे | बांध की वजह से लोगों का उजड़ना, वंशानुगत परिवेश, सांस्कृतिक सामान्यतया का नष्ट होना और स्वशासन अधिकार का अंत होना आदि इस आंदोलन के प्रमुख मुद्दे रहे | पर्यावरण बचाव के संदर्भ में भारत का दूसरा बड़ा और चर्चित आंदोलन नर्मदा आंदोलन था | जिसने जन समूह में व्यापक स्तर पर जागरूकता पैदा की |

भूमंडलीकरण का यह दौर, ऐसा दौर है जबकि हमारा शत्रु हमें प्रत्यक्ष दिखाई नहीं देता है | वास्तव में जब कोई साकार और एक शत्रु हो तब तो हमारी आखें उसको देखने में सक्षम हो पाती है परंतु यहाँ तो पूरे कुएं में ही भांग पड़ी हुई है | मनुष्यों ने प्राकृतिक संसाधनो का दोहन पूर्ण व्यवस्था के साथ किया है एवं हमारे पर्यावरण को काफी क्षति पहुचाई है | फलस्वरूप किसी भी प्राणी के लिए आवश्यक मृदा, जल, अग्नि, आकाश और वायु इन पाँचो तत्वो में असंतुलन पैदा हो गया है | यह असंतुलन पैदा कर्ता हमें दिखाई नहीं देता है | विकास की सीढ़ियाँ चढ़ने में हम इतने लीन हो गए कि हमने वृक्षों को काट डाला, जंगल उजाड़ डाले, पेड़ लगाने बंद कर दिए और झीलों को पाट कर माल बना दिए | प्रदूषण कि चिंता किए बिना हमने प्लास्टिक का प्रयोग किया और अपने पैरों पर ही कुल्हाड़ी मार ली | भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21(प्राण एवं दैहिक स्वतन्त्रता का संरक्षण) के तहत प्रत्येक सरकार का यह दायित्व बनता है कि वह अपने नागरिकों को स्वस्थ एवं स्वच्छ पर्यावरण उपलब्ध कराए | यह नागरिकों का अधिकार है, लेकिन इसके साथ ही अनुच्छेद 51(क) के तहत प्राकृतिक पर्यावरण कि रक्षा और उसका संवर्धन करना भी हमारा मौलिक कर्तव्य है | अपने मौलिक अधिकारों के लिए सदैव सजग रहने वाले हम भारतीयों कर्तव्यों को निभाने में बहुत पीछे रह जाते हैं जिसके भयावह परिणाम आज सबके सामने हैं | पर्यावरण को बचाना केवल सरकार का काम नहीं है, यह एक सामाजिक कर्तव्य है कि जिस समाज में हम सांस लेते है उसे सर्वप्रथम सांस लेने योग्य बनाए रखे |

संदर्भ

1. कामायनी, जयशंकर प्रसाद, शिव पुस्तक केंद्र , सं. 2012 पृष्ठ -95
2. काशीनाथ सिंह, साठोत्तरी मेरा परिचय है, पहचान नहीं (साक्षात्कार), परिकथा, जुलाई –अगस्त 2012, सितम्बर –अक्तूबर 2012, संपादक –शंकर, पृष्ठ -21
3. इंडिया टुडे, 5जून 2019, पृष्ठ -83
4. जनसत्ता, अरावली का संकट संपादकीय, 15 मार्च 2019
5. फांस, संजीव, वाणी प्रकाशन, सं. 2005 पृष्ठ-36
6. काशीनाथ सिंह, सुख, कहानी –उपखान, राजकमल प्रकाशन, सं.2010, पृष्ठ -18
7. काशीनाथ सिंह, रेहन पर रग्घू, राजकमल प्रकाशन, सं . 2017 , पृष्ठ -12
8. अमिताभ घोष, इंडिया टुडे, 20 मार्च 2019 पृष्ठ -70